ज़िले में 597 की जगह मात्र 283 महिला पुलिसकर्मी

फ़रीदाबाद (म.मो.) महिला सुरक्षा के नाम पर हेल्पलाइन 1091 व दुर्गा शक्ति का ढोल पीटने वाली खट्टर सरकार की पोल उस वक्त तुरंत खुल जाती है जब इन सेवाओं की जरूरत किसी महिला को पड़ती है। गतांक में सुधी पाठकों ने पढा होगा कि एनएच-5 नम्बर निवासी दो बहनों-खुशबू व दिवांशी ने जब हेल्पलाइन 1091 पर फ़ोन किया तो तीन घंटों तक तो कोई सहायता आई ही नहीं और तीन घंटे बाद भी एनआईटी थाने से फ़ोन आता है कि दोनों बहने सहायता लेने खुद ही थाने आ जायें। डीसीपी के हड़काने पर तीन पुरुष पुलिसकर्मी ही मौके पर पहुंचे जिनके साथ अस्पताल जाने से दोनों बहनों ने मना कर दिया। डीसीपी के कहने के बावजूद महिला पुलिस का इन्तज़ाम नहीं हो पाया।

इन्तज़ाम होता भी कहां से, ज़िले की 20 लाख से अधिक आबादी के लिये मात्र 284 महिला पुलिस-कर्मियों को तैनात किया गया है जबकि यहां के लिये स्वीकृत पद हैं 597 यानी जरूरत कीआधी तैनाती। वास्तव में देखा जाय तो इतनी बड़ी जनसंख्या के लिये तो ये स्वीकृत पद भी कम हैं। पुरुष प्रधान इस महकमे के प्रति महिलाओं का विश्वास एवं सुरक्षा की भावना को बढावा देने के लिये महिला पुलिस की आवश्यकता को समझा गया था। लेकिन इनकी अपर्याप्त संख्या न तो महिलाओं में कोई विश्वास जमा पा रही है और न ही हेल्पलाइन 1091 का भरोसा।

जो महिला पुलिस है भी, कम संख्या में ही सही, उसकी तैनाती भी कोई बहुत तर्क संगत नहीं है महिला थानों का कॉनसेप्ट तो बिल्कुल ही ग़लत है। यदि यह इतना बढिया होता तो चंडीगढ़ व दिल्ली जैसे शहर इसको सबसे पहले लपक लेते। इस मामला में केरल का उदाहरण सबसे अनुकर्णीय है। वहां का हर थाना ही महिला थाने की आवश्यकता पूरी करता है क्योंकि हर थाने में आवश्यकतानुरूप महिला पुलिस तैनात रहती है। दिल्ली व चंडीगढ में भी लगभग ऐसा ही है। यहां के थानों में भी जो महिला पुलिस तैनात है उसके ज़िम्मे भी दफ़्तरी व अन्य अनेक काम रहते हैं जबकि उनकी असल आवश्यकता पड़ती है महिलाओं से सम्बन्धित सुरक्षा के लिये। दरअसल महकमे में एक समस्या महिला पुरुष अनुपात की है। इस वक्त यह अनुपात 7:93 का है जिसे 33:67 का होना चाहिये।

दुर्गा शक्ति के नाम पर 120 पुलिसकर्मियों में महिला व पुरुष दोनों शामिल हैं। इनको 3 भागों में बांटा गया है- एनआईटी, बल्लबगढ़ व सेंट्रल। इनकी ड्यूटी प्रातः 9 से सायं 5 बजे तक रहती है। इनका मुख्य काम स्कूलों व कॉलेजों में जाकर लड़कियों को प्रवचन द्वारा जागरूक व सशक्त करना मात्र है। शहर में छेड़खानी करने वाले लफ़ंदर इन्हें देख कर थोड़ी देर को दांय-बांय हो जाते हैं। उसके बाद फ़िर अपनी हरकतों पर उतर आते हैं। संकट के समय जब किसी लड़की को इनकी सहायता की जरूरत पड़ती है तो उस वक्त ये ढूंढे से डीसीपी को भी नहीं मिलती।

बड़खल क्षेत्र की सीवर लाइन हेतु 100 करोड़?

फ़रीदाबाद (म.मो.) बड़खल विधानसभा क्षेत्र में मौजूद कुल 200 किलोमीटर लम्बी सीवर लाइन कंडम घोषित कर दी गयी है। नई लाइन डालने हेतु 100 करोड़ रुपये का एस्टीमेट बना कर मंजूरी हेतु सरकार को भेज दिया गया है। इस हिसाब से नई लाइन की लागत 50 लाख रुपये प्रति किलोमीटर आयेगी। इसमें एक सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट व डिसपोजल भी शामिल बताया गया है। विदित है कि इस क्षेत्र में एनएच-1,2,3,4 व 5 के अलावा गांधी कॉलोनी से लेकर सेक्टर 21 होते हुए दिल्ली बार्डर तक का क्षेत्र शामिल है।

कंडम हो चुकी लाइन के बारे में कहा जा रहा है कि वह बहुत पुरानी हो चुकी है। शहरवासी जानते हैं कि न्यू टाऊन क्षेत्र में सीवर लाइन का निर्माण कार्य 1960 के दशक के अन्त में शुरू हुआ था और सेक्टर 21 व अन्य सेक्टरों का निर्माण ही 1970 के दशक में हुआ था। इस प्रकार कुल मिला कर पुरानी हो चुकी यह लाइन मात्र 50 साल ही पुरानी है। दुनिया में कोई भी सीवर लाइन केवल 50 साल के लिये नहीं बल्कि सैंकड़ों साल के लिये बनाई जाती है। लंदन शहर की सीवर लाइन 150 वर्ष से अधिक पुरानी है और उसमें कभी कोई रुकावट या शिकायत नहीं आती और न ही उसमें घुस कर सफ़ाईकर्मी मरते हैं।

उक्त 100 करोड़ तो मात्र शहर के एक हिस्से के लिये बताये गये हैं बाकी बचे 3 हिस्सों का भी हाल तो यही है। इस हिसाब से तो उनके लिये भी 300 करोड़ की और जरूरत पड़ेगी। वैसे 1975 के बाद आबाद हुये सेक्टर 7,10 व 22 के हाउसिंग बोर्ड कॉलोनियों की बनाई गई सीवर भी बदली जा रही है। यहां तो और भी मजे की बात है कि पहले सीमेंट की सड़क बनी फ़िर उसे तोड़ कर नई सीवर लाइन डाली जा रही है। यानी सीवर डालने में तो खायेंगे ही सीमेंटिड सड़क को तोड़ने व दोबारा बनाने में भी तो मोटा कमीशन मिलेगा। वेसे यह अभी पता नहीं कि टूटी सड़कें कब तक बनेंगी और नई सीवर लाइन कब तक चालू हो पायेगी

जिस रफ़्तार से सरकारी मशीनरी में हरामखोरी व रिश्वतखोरी चल रही है, उस से समझा जा सकता है कि इतनी भारी भरकम रकमें खर्च करने के बावजूद यथास्थिति में कोई बड़ा परिवर्तन होने की सम्भावा नहीं है। सीवर लाइनें यूं ही उफ़नती व सड़ती रहेंगी क्योंकि यहां पर लक्ष्य स्थिति को सुधारना नहीं बल्कि येन-केन प्रकारेन जनता का पैसा डकारना है।

जनरेटरों से होने वाला ध्वनि एवं वायु प्रदूषण रोका जा सकता है

फ़रीदाबाद (म.मो.) बार-बार बिजली फ़ेल होने के कारण लोगों को खासकर दुकानदारों अस्पतालों व कारखानों में बड़े-बड़े जनरेटरों का प्रयोग अब आम बात हो गयी है। इसके अलावा समारोहों व भवन निर्माण कार्यों के लिये भी लोग अस्थाई कनेक्शन लेने की बजाय जनरेटर से ही गुजारा करना बेहतर समझते हैं। यद्यपि जनरेटर की बिजली काफ़ी महंगी पड़ती है। डीज़ल की बढी कीमतों ने तो इसे और भी महंगा बना दिया है। परन्तु फ़िर भी लोगों को इसका इस्तेमाल करना पड़ता है; जाहिर है यह उनकी मजबूरी है कोई शौक नहीं।

अब सरकार ध्वनि एवं वायु प्रदूषण घटाने के लिये जनरेटरों का प्रयोग घटाने के लिये जनता को जागरूक करने का नाटक कर रही है।

समझाया जा रहा है समारोहों आदि के लिये जनरेटर की बजाय अस्थाई बिजली कनेक्शन प्राप्त करें। परन्तु इसमें भी दो मोटी समस्यायें हैं पहली तो यह कि अस्थाई कनेक्शन का प्रति यूनिट रेट कमर्शियल से भी डेढ गुणा है और इसे लेने के लिये बिजली बाबुओं के जो चक्कर काटने पड़ते हैं वे अलग से। दूसरी मुसीबत यह कि भरोसा नहीं कब और कितने घंटों के लिये बिजली चली जाय।

दूसरी ओर यदि समारोह के लिये जनरेटर किराये पर ले लिया तो फ़िर उसे चलायें या न चलायें किराया तो पूरा ही देना पड़ेगा। ऐसे में कोई भी व्यक्ति अस्थाई कनेक्शन व जनरेटर दोनों की सेवा लेना नहीं चाहता। वह केवल जनरेटर पर ही भरोसा करना बेहतर समझता है। कुल मिलाकर निष्कर्ष यह निकलता है कि सरकार जनता को जागरूक करने की बजाय खुद जागरूक होकर बिजली सप्लाई को सुचारू, सस्ती व भरोसेमंद बनाये।

आयुष्मान का झुनझुना जोर-शोर से बज रहा है और बीके अस्पताल में लोग मर रहे हैं

फ़रीदाबाद (म.मो.) बीते सप्ताह 11 सितम्बर को भीम बस्ती की चित्रा को डिलिवरी के लिये ज़िले के मुख्य अस्पताल बादशाहखान में लाया गया। डॉ. अर्चना गुप्ता ने सिजेरियन ऑपरेशन द्वारा डिलिवरी करा कर मात्र 20 घंटों के अन्दर-अन्दर महिला को सफ़दरजंग दिल्ली के लिये रेफ़र कर दिया। सभी जानते हैं कि वहां पहुंचने वाले मरीज़ की क्या दुर्दशा होती है। लिहाज़ा वहां जाने की अपेक्षा महिला के परिजन उसे एक के बाद एक स्थानीय निजी अस्पतालों में ले गये। परन्तु किसी ने भी उसे भर्ती नहीं किया तो उसे वापस बीके में ही लाया गया जहां उसे मृत घोषित कर दिया।

असल मामला यह था कि महिला को दाखिल करते वक्त डॉक्टर ने पहले से ही मरीज़ में खून की कमी का संज्ञान नहीं लिया जो बहुत ही न्यूनतम स्तर पर था। ऊपर से ऑपरेशन के दौरान जो रक्तसराव हुआ वह रूकने का नाम ही नहीं ले रहा था। ऐसे में डॉक्टर ने इसे रोकने व 2-4 यूनिट खून चढाने की बजाय मरीज़ को धक्का देना ही बेहतर समझा जो उसने कर डाला। सभी जानते हैं कि बीके अस्पताल में ब्लड बैंक है जिससे उम्मीद की जाती है कि ऐसे संकट की स्थिति में मरीज़ को खून चढाया जाय। डॉ. अर्चना गुप्ता ने यह काम करने की बजाय रैफ़र करके अपना काम और मरीज की जान निपटा दी। कानून की नज़र से देखा जाय तो डॉक्टर द्वारा किया गया यह एक आपराधिक कृत्य था। यदि इस देश में कानून का राज हो तो डॉक्टर के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 304 के अन्तर्गत मुकदमा चलाया जाता।

जानकारों के मुताबिक डॉक्टर गुप्ता ने मरीज़ को भर्ती करने व ऑपरेशन से पहले न तो कोई फ़ाइल बनाई थी और न ही रजिस्टर में इन्ट्री की थी लेकिन मौत हो जाने के बाद रजिस्टर में ऊपर नीचे बची खाली जगहों में खाना पूर्ति करके अपने आप को हर प्रकार की जांच व पकड़ से सुरक्षित कर लिया।

कुत्ता काटे से मरा किशोर

उसी सप्ताह एसी नगर निवासी एक 14 वर्षीय किशोर की मृत्यु केवल इस लिये हो गयी कि उसके परिजनों ने कुत्ता काटने के बाद दो दिन बीके अस्पताल के चक्कर काटने में बर्बाद कर दिये। जब वहां टीका नहीं मिला, जो प्रायःनहीं मिलता, तो बाजार से लेकर लगाया। लेकिन तब तक बहुत देर हो चुकी थी। रैबीज़ के किटाणु किशोर के शरीर में जड़ पकड़ चुके थे। ऐसे में एस्कार्टस व अपोलो अस्पताल वालों ने भी हाथ खड़े कर लिये थे। बच्चा बेमौत मारा गया। क्या इसके लिये खट्टर व अनिल विज सीधे तौर पर जिम्मेवार नहीं हैं? एक तो शहर में कुत्तों को मारने पर पाबंदी और ऊपर से अस्पताल में टीके उपलब्ध नहीं होते। क्यों खट्टर सरकार की जिम्मेवारी नहीं बनती कि बजाय एक बीके अस्पताल के, ज़िले की तमाम सरकारी डिस्पेंसरियों में हर वक्त रैबीज़ के टीके उपलब्ध करायें?

'हर लाठी का हिसाब ब्याज सहित लेंगे' कर्मचारी, जेल भरो आंदोलन फ्लॉप

फ़रीदाबाद (म.मो.) मंगलवार 18 सितम्बर को सर्वकर्मचारी संघ ने 'जेल-भरो' आंदोलन किया। लेकिन जेल भरना तो दूर एक भी व्यक्ति जेल के दरवाजे तक नहीं पहुंचा। बीते एक वर्ष में औद्योगिक मज़दूरों व सरकारी कर्मचारियों ने कम से कम 4 बार 'जेल भरो' आन्दोलन का ड्रामा कर के अपनी कमजोरी जग जाहिर कर दी है। यदि जेल जाने की हिम्मत नहीं है तो कम से कम जेल भर देने जैसा बड़ा दावा तो नहीं ही करना चाहिये। जानकार तो यहां तक भी मानते हैं कि यदि सभी कर्मचारियों को वास्तविक जेल भरने के संकल्प के साथ बुलाया जाता तो डीसी कार्यालय पर प्रदर्शन करने भी कोई न आता।

इसमें कोई दो राय नहीं कि शासक वर्ग यथा संभव अपने कर्मचारियों को लगातार प्रताड़ित करके उनका शोषण कर रहा है। इसके विरोध में विभिन्न कर्मचारी संगठन अकेले-अकेले व सामूहिक रूप से प्रदर्शनों व आन्दोलनों का सिलसिला चला रहे हैं। इसके एवज में लाठियां भी खा रहे हैं और नौकरी से भी हाथ धो रहे हैं। कर्मचारी नेता इसका हिसाब ब्याज सहित चुकाने की बात तो करते हैं परन्तु कब और कैसे चुकता करेंगे, इसका खुलासा करने में असमर्थ हैं। लेकिन एक बात तो तय है कि जब तक तमाम संगठन एक जुट होकर अपनी रणनीति नहीं बदलेंगे, उनकी ये धमकियां केवल बंदर घुडकियां ही साबित होंगी।

शोषक एवं उत्पीड़न का पर्याय बन चुके शासक वर्ग से सरकारी कर्मचारी अकेले अपने दम पर कभी भी नहीं निपट सकते। इसके लिये आम जनता के सक्रिय सहयोग की सख्त जरूरत है। कर्मचारियों को यह समझना चाहिये कि उनसे कहीं अधिक प्रताड़ना व शोषण तो उस आम जनता का हो रहा है जिसका वास्ता आये दिन इन कर्मचारियों से पड़ता है। उस आम जनता की इनके प्रति क्या राय है, इनके प्रति कितनी हमदर्दी, या बेरूखी है; इनसे कितनी खुश या प्रताड़ित महसूस करती है। महकमा चाहे बिजली, पानी, सीवर का हो या परिवहन, राशन का हो तहसील का हो या शिक्षा का हो, कहीं से भी तो आम आदमी सन्तुष्ट होकर नहीं निकलता।

यह भी ठीक है कि आम आदमी की असन्तुष्टि के लिये कर्मचारी वर्ग नहीं बल्कि शासक वर्ग जिम्मेवार हैं परन्तु शासक वर्ग के रूप में अथवा मुखौटे में उन्हें सामने बैठा कर्मचारी ही दिखाई देता है। कर्मचारी वर्ग अपना दायित्व समझते हुये आम आदमी को समझाये कि उनकी असन्तुष्टि एवं समस्या के लिये शासन एवं प्रशासन है। जनता को समझाया जाये कि किस प्रकार मंत्री व संतरी सब मिल कर उनके संसाधनों को लूट रहे हैं। बेशक यह काम आसान नहीं है, जनता को इतने बड़े पैमाने पर जागरूक करना तब तक आसान हो भी नहीं सकता जब तक प्रत्येक कर्मचारी अपना लक्ष्य न बना ले। हरामखोरी व रिश्वतखोरी करने वाले कर्मचारियों की नकेल कसी जाय। यदि कर्मचारियों को यह सब करना असम्भव लगता है तो खाई गयी लाठियों का ब्याज तो क्या मूल भी नहीं मिलेगा बल्कि समय-समय पर और भी लाठियां खानी पड़ सकती है।

मुफ़्त साइकिल के चक्कर में छात्राओं ने गवांया सारा दिन

फ़रीदाबाद (म.मो.) सरकारी मशीनरी न जाने कब सलीके से काम करना सीखेगी। एक सरकारी आदेशानुसार अनुसूचित जाति वर्ग की 9 वीं व 11 वीं जमात की छात्राओं को स्कूल आने जाने के लिये मुफ़्त साइकिलें बांटने का निर्णय हुआ। इसके लिये ज़िले भर से पात्र छात्राओं को सोमवार 17 सितम्बर को सेक्टर 16 स्थित डीईओ (ज़िला शिक्षा अधिकारी) कार्यालय में सुबह 8 बजे से ही एकत्र कर लिया गया। दोपहर 12 बजे इन्हें बताया गया कि यहां कोई साइकिल नहीं हैं, लिहाज़ा छात्र अपनी-अपनी साइकिल खुद खरीद कर बिल स्कूल में दे दें, जब बजट आयेगा तो उन्हें पेमेंट दे दी जायेगी।

सवाल यह उठता है कि यदि यही करना था तो छात्राओं को स्कूल से पढाई छुड़ा कर, दूर-दूर से यहां बुलाया ही क्यों गया था? जिनकी क्षमता होती वे खरीद कर बिल जमा कर देते जो रह जाते उनके बारे में अलग से कुछ विचार किया जा सकता था। विदित है कि असुरक्षा के इस जमाने में सभी छात्रायें अपने-अपने अभिभावकों के साथ डीईओ कार्यालय पहुंची थी। छात्राओं की पढाई व अभिभावकों की दिहाड़ी मुफ़्त में ही बर्बाद करा दी गयी।

सरकारी निर्णय अनुसार 9 वीं जमात की छात्राओं को 20 ईंची व 11 वीं वाली छात्राओं को 22 ईंची साइकिल क्रमशः 3100 व 3300 रुपये कीमत की दी जानी थी। क्या ही अच्छा होता यदि सरकार इन दोनों तरह की साइकिलों की सूची बना कर साइकिल विक्रेता को दे देती और उन्हें स्कूल दर स्कूल भिजवा देती। दिन भर की पढाई खराब किये बगैर छात्रायें छुट्टी के बाद अपनी-अपनी साइकिल लेकर घर चली जाती। परन्तु सरकार को तो काम कम और ड्रामेबाज़ी ज़्यादा करनी होती है। इसलिये शोबाज़ी के लिये साइकिल मेले का आयोजन किया गया था। कुछ जानकारों का कहना है कि गत वर्ष भी ऐसा ही हुआ था जब कोई साइकिल विक्रेता इस तरह के मेले में नहीं आया था। एक साइकिल विक्रेता का कहना है कि साइकिलें देने के बाद डीईओ दफ़्तर से पेमेंट लेना बहुत महंगा पड़ता है।